संदेश

*स्रोत: मानव व्यवहार दर्शन

भूमि: स्वर्गताम् यातु, मानवो यातु देवताम् ।

धर्मो सफलताम् यातु, नित्यम् यातु शुभोदयम् ।

व्यापक शून्यावकाश में स्थित अनन्त ब्रम्हाण्डों में से एक ब्रम्हाण्ड में अंगभूत इस पृथ्वी पर वर्तमान में पाये जाने वाले मानव अत्यन्त सौभाग्यशाली है, क्योंकि इनको ह्रास और विकास का अध्ययन एवम् प्रयोग करने का स्वर्णिम अवसर व साधन प्राप्त है ।

अभ्युदय (सर्वतोमुखी समाधान) सबको सर्वत्र उत्प्रेरित कर रहा है कि - "स्वयम् का मूल्यांकन कर लो- गलती अपराध नहीं करोगे फलत: दु:खी, प्रताड़ित और दरिद्र नहीं होगे ।"

स्वयम् का मूल्यांकन करने के लिये स्वयम्-सिद्ध मूलभूत आधार हृदयंगम करना होगा, वह है :-

1. भूमि (अखण्ड राष्ट्र) एक - राज्य अनेक
2. मानव जाति एक - कर्म अनेक,
3. मानव धर्म एक - समाधान अनेक,
4. ईश्वर (व्यापक) - देवता अनेक ।

एक- प्रत्येक मानव मानव मात्र को एक इकाई के रूप में जाने और उसके साथ तदनुसार निर्वाह कर सके - ऐसी क्षमता, योग्यता और पात्रता सहज विकास के लिए,

दो- सहअस्तित्व, सन्तुलन, समाधान, अभय और सुख सहज अक्षुण्णता के लिए,

तीन- स्वधन, स्वनारी/ स्व पुरुष तथा दया पूर्ण कार्य व्यवहार सम्पन्न जीवन दृढ़ता पूर्वक जीने में समर्थ होने के लिए,

चार- अमानवीयता से मानवीयता और मानवीयता से अति-मानवीयता की ओर गति के लिए, सुगम मार्ग पाने के लिए,

पाँच- अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था में दायित्वों का सहजता पूर्वक निर्वाह करने के लिए,

छ:- आशित मानवीय संस्कृति एवम् सभ्यता के ज्ञान सहित प्रमाणित होने के लिए,

सात- राष्ट्र में मानवीयता पूर्ण संस्कृति एवम् सभ्यता सहज विकास के लिए आवश्यक विधि, व्यवस्था एवम् नीति पक्ष में पारंगत होने के लिए, इनके आधार भूत तथ्यों का अध्ययन आवश्यक है ।

उपरोक्त अध्ययन को सुलभ करने हेतु यह ग्रन्थ "मध्यस्थ दर्शन (सहअस्तित्ववाद)" का प्रथम भाग 'मानव व्यवहार दर्शन' के नाम से सम्पूर्ण मानव समाज को अर्पित करते हुए, मैं परम प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ ।

पूर्ण विश्वास है कि सांकेतिक तथ्यों का अध्ययन करने के पश्चात् यह ग्रन्थ आपके व्यवहार एवम् आचरण में मानवीयता पूर्ण दृष्टि, गुण व प्रवृत्ति को प्रस्थापित करने की प्रेरणा देगा एवम् आपके व्यक्तित्व के विकास में सहायक होगा जिससे -

भूमि ही स्वर्ग हो जाएगी, मानव ही देवता हो जायेगें,

धर्म सफल हो जाएगा और नित्य मंगल ही होगा ॥

- ए. नागराज

मानव व्यवहार दर्शन –लेखकीय

मानव में साम्यत: पाये जाने वाले रूप, बल एवं बुद्धि के योगफल से निर्मित पद एवं धन तथा इन सबके योगफल से उत्पन्न शिष्टताओं एवं भौगौलिक संरचनाओं व तदनुसार आवश्यकताओं के आधार पर परस्पर सामरस्यता की कामना पायी जाती है ।

शिष्टता की वैविध्यता, सम्पत्ति एवं स्वत्व की विस्तार-प्रवृत्ति की उत्कटता के अनुसार मानव में सीमाएं दृष्टव्य है । मानव में प्रत्येक सीमित संगठन, प्रधानत: भय-मुक्ति होने के उद्देश्य से हुआ है । सर्वप्रथम मानव ने जीव-भय एवं प्राकृतिक भय से मुक्त होने के लिये साधारण (आहार, आवास, अलंकार) एवं हिंसक साधनों का आविष्कार किया है । इन हिंसक साधनों से मानव की परस्परता में अर्थात् परस्पर दो मानव, परिवार वर्ग एवं समुदायों के संघर्ष में प्रयुक्त होना ही युद्ध है । इसके मूल में प्रधानत: संस्कृति, सभ्यता, विधि एवं व्यवस्था की वैविध्यता है । साथ ही उसके अनुसरण में स्वत्व एवं सम्पत्ति के विस्तारीकरण की प्रवृत्ति भी है । यही केन्द्र-बिन्दु है ।

मानव, मानव के साथ संघर्ष करने के लिये, प्रत्येक संगठित इकाई अर्थात् परिवार एवं वर्ग अपनी सभ्यता एवं संस्कृति को श्रेष्ठ मानने के आधार पर स्वत्व और सम्पत्तिकरण के विस्तारीकरण को न्याय-सम्मत स्वीकार लेता है, फलत: उसी का प्रतिपादन करता है और आचरण एवं व्यवहार में प्रकट करता है । यही स्थिति प्रत्येक सीमा के साथ है ।

इस ऐतिहासिक तथ्य से ज्ञात होता है कि प्रत्येक सामुदायिक इकाई के मूल में सार्वभौमिकता को पाने का शुभ संकल्प है । उसे चरितार्थ अथवा सफल बनाने का उपाय सुलभ हुआ है, जो “मध्यस्थ दर्शन” के रूप में मुखरित हुआ है । यह मानवीयतापूर्ण सभ्यता, संस्कृति, विधि एवं व्यवस्था के लिए प्रमाणों के आधार पर वर्तमान बिन्दु में दिशा को स्पष्ट करता है ।

“वर्ग विहीन समाज को पाने के साथ ही प्रत्येक व्यक्ति में पाई जाने वाली न्याय पिपासा, समाधान एवं समृद्धि वांछा एवं सहअस्तित्व में पूर्ण सम्मति को सफल बनाने की आप्त कामना के आधार पर मध्यस्थ दर्शन को प्रकट करने का शुभ अवसर मुझे प्राप्त हुआ है ।”

“सहअस्तित्व सूत्र व्याख्या ही स्वयं में सामरस्यता है ।” सामरस्यता की स्थिति रूप, गुण, स्वभाव एवं धर्म की साम्यता समाधान पर आधारित है, जो दृष्टव्य अर्थात् समझ में आता है, जैसे पदार्थावस्था की प्रकृति में रूप सामरस्यता, वनस्पति अर्थात् प्राणावस्था की प्रकृति में गुण सामरस्यता, जीवावस्था की प्रकृति में परस्पर जीने की आशा व स्वभाव सामरस्यता का प्रकटन स्पष्ट है । धर्म सामरस्यता ही मानव में अखंडता है ।

इसके अतिरिक्त अन्य अवस्थाओं में पाये जाने वाले धर्म, स्वभाव, गुण एवं रूप की सीमा में सामरस्यता की पूर्णता को पाना संभव नहीं है, यदि संभव होता तो मानव के पीछे की अवस्थाओं में सहअस्तित्व की तृप्ति को जानना, मानना था, किन्तु इनका न होना देखा जा रहा है । फलत: अग्रिम विकास में संक्रमण एवं पद में आरुढ़ता दृष्टव्य है । मानव में ही धर्म सामरस्यता को पाने की संभावना स्पष्ट हुई है । इसको पा लेना ही मानव का परमोद्देश्य है, उसे सर्व सुलभ कर देना ही मध्यस्थ दर्शन का अभीष्ट है । धर्म सामरस्यता का तात्पर्य सर्वतोमुखी समाधान सम्पन्न होने से है ।

“मानव-जीवन सफल हो”

“अन्य में संतुलन प्रमाणित हो”

- ए. नागराज / अमरकंटक १९७६

मध्यस्थ दर्शन (सहअस्तित्ववाद)

प्रणेता एवं लेखक: अग्रहार नागराज

सम्पूर्ण वांडमय डाउनलोड:

www.madhyasth.org | www.bit.ly/dpsroot